P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-5* ISSUE-4* December- 2017
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

उत्तराखण्ड की लोकगाथाओं में वीरांगनाएं

बबीता पांथरी
रिसर्च स्कॉलर,
इतिहास विभाग,
एस.जी.आर.आर. (पी.जी.) कालेज,
देहरादून, उत्तराखण्ड

एम0एस0 गुसांई
असि. प्रो0 एवं विभागाध्यक्ष,
इतिहास विभाग,
एस.जी.आर.आर. (पी.जी.) कालेज,
देहरादून, उत्तराखण्ड

सारांश

उत्तराखण्ड की भूमि ने अनेक वीरों तथा वीरांगनाओं को जन्म दिया है। उत्तराखण्ड का मध्य कालीन इतिहास युद्धों और संघर्षों का काल है। जहाँ राजा अपने राज्य की सुरक्षा व विस्तार हेतु निरन्तर युद्धों में लिप्त रहते थे। इन युद्धों में जिन वीरों ने अद्धितीय शौर्य का परिचय दिया उनके पराक्रम की कहानियां पवाड़ों के रूप में मिलती है। वीरों की तरह यहाँ अनेक वीरांगनाएं भी हुई, जिनकी शौर्य गाथाएं ऐतिहासिक स्तर पर तो नहीं किन्तु लोकगाथाओं के रूप में गाँव–गाँव में बड़े आदर व सम्मान के साथ गाई जाती हैं। लोकगाथाओं में वर्णित वीरांगनाओं में तीलू रौतेली, महारानी कर्णावती, महारानी जियारानी, वीरांगना धना, वीरांगना रानी राजा लक्ष्मी चंद आदि न केवल युद्ध स्थल में अपनी वीरता व शौर्य का प्रदर्शन करती है अपितु अपने पतियों में, अपने पुत्रों में भी साहस और वीरता का रस भरती नजर आती है और इसके लिए अपने प्राणों का बलिदान करने से भी पीछे नहीं हटती। मध्य हिमालय की अनेक ऐसी वीरांगनाएं जिन्हें इतिहास द्वारा विस्मृत कर दिया गया किन्तु लोकगाथाओं के अमर गायकों ने पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरित कर न केवल हमारे इतिहास को समृद्ध कर हमें गौरव की अनुभूति कराई अपितु पहाड़ की महिलाओं में नई शक्ति जगाकर उन्हें संघर्ष के लिए प्रेरित किया। फलस्वरूप आने वाले समय में महिलाओं ने राष्ट्रीय व स्थानीय आन्दोलनों में भागीदारी की व भारतवर्ष में अपनी पहचान एक निर्भीक व साहसी महिलाओं के रूप में करा सकी। इस शोध पत्र में हमने लोकगाथाओं में वर्णित इन्हीं वीरांगनाओं का अध्ययन प्रस्तुत किया है।

मुख्य शब्द : वीरांगनाएं, लोकगाथा, ऐतिहासिक

प्रस्तावना

भारतवर्ष का नवनिर्मित राज्य ''उत्तराखण्ड'' जो उत्तर प्रदेश के 13 पर्वतीय जिलों को मिलाकर बनाया गया। 09 नवम्बर 2000 को 11वें हिमालयी राज्य और देश के 27वें राज्य के रूप में अस्तित्व में आया।[1] भारत के मानचित्र में उत्तराखण्ड राज्य की स्थिति $28^0 43'$ से $31^0 27''$ उत्तरी आक्षांश एवं $77^0 34'$ से $81^0 22'$ पूर्वी देशान्तर के मध्य, लगभग 53483 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र पर विस्तृत है।[2]

अध्ययन का उद्देश्य

इस अध्ययन का प्रथम उद्देश्य तो यह है कि इसका सम्बंध मेरे शोध शीर्षक से है। इसके अतिरिक्त महिलाओं ने राष्ट्रीय व स्थानीय आन्दोलनों में भागीदारी की व भारतवर्ष में अपनी पहचान एक निर्भीक व साहसी महिलाओं के रूप में कराई किन्तु हमने उनके योगदान को यथोचित स्थान प्रदान नहीं किया। अतः इस शोध पत्र के माध्यम से हमने लोकगाथाओं में वर्णित इन्हीं वीरांगनाओं का अध्ययन प्रस्तुत किया है।

सहित्यावलोकन

इस अध्ययन के लिए हमने अब तक हुए कई अध्ययनों का अवलोकन किया यद्यपि यहाँ उन सभी का पूर्ण विवरण दे पाना संभव नहीं है फिर भी उनमें से कुछ का विवरण इस प्रकार है। उत्तराखण्ड का इतिहासः एक नवीन मूल्यांकन, ऑनलाइन गाथा पब्लिकेशन, लखनऊ(2016) में उत्तराखण्ड के विस्तृत इतिहास का वर्णन है। इसी पुस्तक में लोकगाथाओं के अन्तर्गत वीर गाथाएं और प्रेम संबंधी गाथाएं जबकि पौराणिक गाथाओं के अन्तर्गत कृष्ण संबंधी गाथाएं, स्थानीय देवगाथाएं और पांडव संबंधी गाथाएं का वर्णन है। डॉ सविता मोहन की उत्तराखण्ड समग्र अध्ययन से हमें इस प्रदेश की वीरांगनाओं को क्रमबद्ध करनें में सहायता मिली। शक्ति प्रसाद सकलानी की पुस्तक उत्तराखण्ड की विभूतियां उत्तराखण्ड प्रकाशन (2001) में कुछ महत्वपूर्ण सामाग्री हमारे शोध पत्र से सम्बधित प्राप्त हुई। वीरेंद्र सिंह की पुस्तक गढवाली गाथाओ में लोक देवता

विनशर पब्लिशिंक, देहरादून (2014)में गढ़वाल कुमाऊं के निरन्तर युद्धों, गोरखों, तिब्बत, मैदानी क्षेत्रों से होने वाले बाह्रय आक्रमण के फलस्वरूप युद्ध के जीवनदर्शन बन जाने का उल्लेख किया गया है। इन युद्धों में जिन वीरों व वीरांगनाओं ने भाग लिया उनके पराक्रम की गाथाएं पवाड़ों के रूप में मिलती है। हरिदत्त भटट की गढवाली भाषा और उसका सहित्य में लोक गाथाओं (1976) का विस्तृत वर्णन दिया है। तीलू रौतेली का वीर पुरूषों के परिवार में जन्म लेने के कारण वीरता उसके नस–नस में विद्यमान थी। अपने पिता व भाईयों का बदला लेने के लिए स्थानीय लोगों को एकत्र कर सेना तैयार की जिसका नेतृत्व उसने स्वंय किया। तीलू के खैरागढ़ पर आक्रमण ,रमोली खाल तथा इड़िया–भौण, सल्ट महादेव के इलाकों पर आक्रमण का विस्तार से वर्णन शिवप्रसाद डबराल. की पुस्तक उत्तराखण्ड का राजनैतिक तथा सांस्कृतिक इतिहास–3 में है।' इसके अतिरिक्त डॉ गोविन्द चातक, शिव प्रसाद नैथानी इत्यादि की कृतियों से हमें काफी सामाग्री एकत्रित करने को मिली। वर्तमान महिला सशक्तिकरण के इस युग में यह अध्ययन और भी प्रासांगिक है।

भौगोलिक एवं ऐतिहासिक दृष्टि से उत्तराखण्ड की अपनी एक विशिष्ट पहचान है। उत्तराखण्ड के पुरातत्विक स्त्रोत एवं ऐतिहासिक स्त्रोत इस बात की जानकारी प्रदान करते हैं कि यहाँ पाषाणकाल से ही सभ्यताओं का अस्तित्व था।[3] प्राचीनकाल से मध्यकाल तक यह क्षेत्र प्रमुख राजवंशों – कुणिन्द, शक, कुषाण, कत्यूरी, चन्द एवं पवार राजवंशों के अधिपत्य में रहा। इसके अतिरिक्त यहाँ के प्राचीन इतिहास की जानकारी हमें लोकगाथाओं के माध्यम से मिलती है।[4]

लोकगाथा, लोकसाहित्य का वह रूप है जिसमें परम्परागत मौखिक कथाओं को छन्दोबद्ध कर किसी भी समाज के लोग पीढ़ी दर पीढ़ी से गाते चले आ रहे है।[5] लोकगाथा के लिए अंग्रेजी साहित्य में बैलेड (Balled) शब्द का प्रयोग हुआ है। प्रो0 किटरेज ने बैलेड को ऐसा गीत कहा है– 'जिसमें कोई कहानी हो अथवा वह कहानी जो गीतों के माध्यम से व्यक्त की गई हो।' लोक कथाओं में इतिहास और कल्पना का सुन्दर समन्वय रहता है।[6] इन गाथाओं को दो भागों में बाटाँ जाता है:–

1. लौकिक गाथाएं (पॅवाड़ा)
2. पौराणिक गाथाएं (जागर)

लोकगाथाओं के अन्तर्गत वीर गाथाएं और प्रेम संबंधी गाथाएं आती है। जबकि पौराणिक गाथाओं के अन्तर्गत कृष्ण संबंधी गाथाएं, स्थानीय देवगाथाएं और पांडव संबंधी गाथाएं आती है।[7] पौराणिक लोक गाथाएं अर्थात जागर गाथाएं बहुत प्राचीनकाल से ही चली आ रही है।[8] गढ़वाल में वीर गाथाओं के लिए 'पंवाड़ा' तथा कुमाऊं में वीर गाथाओं को भंड़ों' कहते हैं।[9] इनको गाने वाले भाट कहलाते हैं।[10] वीर गाथाओं का रचनाकाल 8वीं शताब्दी से 1800 ई तक माना जाता है। यह काल युद्धों और संघर्षों का इतिहास है।[11] ''गढ़वाल कुमाऊं के निरन्तर युद्धों, गोरखों, तिब्बत, मैदानी क्षेत्रों से होने वाले बाह्रय आक्रमण के फलस्वरूप युद्ध ही जीवन दर्शन बन गया।[12] इन युद्धों में जिन वीरों व वीरांगनाओं ने भाग लिया उनके पराक्रम की गाथाएं पवाड़ें के रूप में मिलती है।[13] जो हमें गौरव की अनुभूमि कराती है। इनमें से कुछ वीरांगनाओं का विवरण निम्नवत् है:–

कुमारी तीलू रौतेली

गढ़वाल की रानी लक्ष्मीबाई तीलू रौतेली गढ़वाल राज्य के गुराड़ गाँव, परगना चौंदकोट के थोकदार वीर पुरूष भूपसिंह की पुत्री थी। इनकी माता का नाम मैणा देवी था। वह दो वीर योद्धा भाईयों भगतु तथा पटवा की बहन थी। इनका विवाह 15 वर्ष की आयु में ईड़ा गाँव के श्री भुप्पा नेगी के पुत्र के साथ तय हुआ था, परन्तु विवाह के पूर्व ही तीलू का भावी पति दुश्मनों के साथ युद्ध करते हुए वीरगति को प्राप्त हो गया।[14] उस समय कुमाऊं राज्य के पश्चिमी सीमावर्ती क्षेत्रों के कत्यूरा सरदार गढ़वाल की पूर्वी सीमा में घुस कर लूटपाट किया करते थे। इस आक्रमण का मुकाबला करते हुए तीलू रौतेली के पिता व भाई वीरगति को प्राप्त हुए। इस प्रकार नियति के क्रूर हाथों ने असमय ही तीलू रौतेली से उसके पिता का साया, भाईयों का साथ तथा उसका सौभाग्य उससे छीन लिए गये। तीलू रौतेली ने ऐसे वीर पुरूषों के परिवार में जन्म लेने के कारण वीरता उसके नस–नस में विद्यमान थी। अतएव अपने पिता व भाईयों का बदला लेने के लिए स्थानीय लोगों को एकत्र कर सेना तैयार की जिसका नेतृत्व उसने स्वंय किया। उसकी बचपन की सहेलियां बेल्लू तथा देवकी ने भी युद्ध में उसका साथ दिया।[15] तीलू सबसे पहले खैरागढ़ पर आक्रमण कर कत्युरियों से मुक्त करा लेती है। फिर रमोली खाल तथा इड़िया–भौण, सल्ट महादेव के इलाकों पर अपना अधिकार कर लेती है। 'भिलण भौन' के युद्ध में तिलू की दोनो सहेलियां मारी जाती है किन्तु तीलू यह युद्ध जीत लेती है। उसके पश्चात कांतियाखाल, चौखुरिया, देघाट, संराईखेत आदि पर उसका अधिकार हो जाता है। इस प्रकार वह अपने पिता तथा भाईयों की मौत का बदला लेती है। यहीं पर उसकी प्रिय घोड़ी बिन्दुली भी शत्रुदल द्वारा मारी जाती है। शत्रुओं को हराने के पश्चात् वह अपने गढ़ डुमैलो और रॉंडा पहुंचती है। रास्ते में नहाने के लिए नयार नदी में उतरती है। उसी समय शत्रु पक्ष के एक सैनिक रामू रजवार अचानक उस पर हमला करता है और वह शेरनी सदा–सदा के लिए सो जाती है। वह 15 से बाईस वर्ष की उम्र तक निरन्तर युद्ध करती रही और शत्रुओं के दाँत खट्टे करती रही।[16] इन सीमान्त क्षेत्रों में इस वीरांगना को देवी के अवतार के रूप में आज भी पूजा जाता है।[17] इसीलिए उससे सम्बन्धित पवाड़ें के अन्त में जागरी और हुड़क्या ये शब्द उच्चारित करते हैं यथा:–

राजुला तू रण चण्डी छई,
अपणो काम कैकी नाम धरीगे।
कौतिखा जाईक खेलणो छयो, खेली याल,
याद तौंकी जुग–जुग रहली–धका धैं धैं।।
तू साक्षी रैली खाहली की देवी,
तू साक्षी रैलो सल्द महादेव,
तुम साक्षी रैला पंच नाम देव,
तुम साक्षी रैला लंगूरिया भैरों,
तू साक्षी रैली कालिका देवी तड़ासर देव,
तू अमर रैली तीलू सिघणी शार्दूला,

जब तक भूमि, सूरज, आसमान,
तीलू रौतेली की तब तक याद रैली,
धका धैं धैं, तीलू रौतेली, धका धै धै।।[18]

महारानी जियारानी

एक लोकगाथा के अनुसार चौदहवीं शती में खैरागढ़ में कत्यूरी शासक प्रीतमदेव का शासन था। उसकी अनेक रानियां थी किन्तु उसका कोई पुत्र न था। वृद्धावस्था में उसने सात वर्ष की कन्या के साथ विवाह किया।[19] जो खाली वंश के पर्वतीय माता तथा मालवा के राजा की पुत्री थी। जागरों तथा लोकगाथाओं में जिया का दूसरा नाम प्योंला (पिंगला) भी मिलता है।[20] जियारानी ने जोशीमठ में भगवान नृसिंह की उपासना से पुत्र प्राप्त किया जिसका नाम दूला धामदेव रखा।[21] दूला धामदेव का पुत्र मालूशाही हुआ। जिसकी प्रेमगाथा राजुला–मालूशाही आज भी प्रसिद्ध है।[22] जियारानी धार्मिक महिला थी। उन्होंने चित्रेश्वर (चित्रशीला रानीबाग) की गुफा में कई वर्षा तक कठोर तपस्या की थी। कुमाऊँ में जब रोहिल्लों का आक्रमण हुआ तो रानीबाग के युद्ध में जियारानी ने तुर्को का डटकर मुकाबला किया और जब शत्रु सैनिक ने रानी को पकड़ने हेतु उसे घेर लिया तब जियारानी ने अपने सम्मान व सतीत्व की रक्षा हेतु अद्भुत वीरता एवं शौर्य का प्रदर्शन करते हुए अपने प्राण न्यौछावर कर दिए। कुमाऊँ में उन्हें देवी के रूप में पूजा जाता है। उसके अनुयायियों के द्वारा प्रतिवर्ष उत्तरायणी पर्व के अवसर पर पवित्र गुफा चित्रशीला का दर्शन व पूजन किया जाता है।[23]

महारानी कर्णावती

वीरांगना महारानी कर्णावती न केवल कुशल प्रशासक थी वरन् अपनी आज्ञा का उल्लंघन करने वालों की नाक कटवा देने के कारण से नक–कटी–राणी के नाम से विख्यात हुई।[24] गढ़ नरेश महिपतिशाह 1631 ई0 में अल्मोड़ा के युद्ध में वीरगति को प्राप्त हुए। उनकी मृत्यु के समय युवराज पृथ्वीपतिशाह के अल्पायु होने के कारण उनकी युवावास्था तक राजकाज उनकी माता कर्णावती द्वारा चलाया गया।[25] उस समय दिल्ली के तख्त पर सम्राट शाहजहां का शासन था। गढ़नरेश महिपतिशाह के समय मुगल सेना गढ़वाल पर आक्रमण करने का साहस न कर सकी थी। किन्तु जब राजमाता कर्णावती द्वारा शासन सम्भाला गया तो एक कमजोर रानी के हाथों से राज्य पर अधिकार करना सरल कार्य होगा यह सोचकर शाहजहाँ ने मुगल सरदार नजाबत खाँ की अध्यक्षता में गढ़राज्य को हस्तगत करने हेतु सेना भेजी।[26] राजमाता कर्णावती ने सीधा मुकाबले की बजाय नीतिज्ञता का सहारा लिया। उन्होंने नजाबत पास सन्देशा भेजा कि वह सम्राट की अधीनता स्वीकार करती है और यदि उन्हें दो सप्ताह की मोहलत दी जाए तो वे दस लाख रू0 सम्राट को भेंट स्वरूप देना चाहती है। नजाबत खाँ रानी कर्णावती के इतनी सरलता से पराजित होने तथा दस लाख की रकम भेंट वसूल करने की आशा से तैयार हो गया। रानी रूपया देने के बहाने विलम्ब करने लगी। इस प्रकार डेढ़ महीना बीत गया इधर नजाबत खाँ की सेना में उनके द्वारा लाई गई खाद्य सामग्री समाप्त होने लगी। इधर रानी ने शत्रुपक्ष की रसद सामग्री लेने जाने वाले मार्गों पर सेना तैनात कर दी। जब कोई शत्रु पक्ष का सैनिक रसद सामग्री लेने हेतु जाता तो गढ़वाली सैनिकों द्वारा लूट लिया जाता था। खाद्य सामग्री के अभाव में मनुष्यों के प्राण ओठ तक आ गये पर रोटी ओठों तक न पहुँची। उसी समय सैनिकों के शिविरों में भीषण ज्वर फैल गया जिससे सैनिक बड़ी संख्या में मरने लगे। ज्वर और भूख से पीढ़ित सैनिकों को गढ़वाली सैनिकों द्वारा घेर लिया गया। युद्ध में अधिकांश सैनिक मारे गये[27] और बचे सैनिक नाक कटवाकर इस शर्मनाक पराजय की कहानी सुनाने दिल्ली पहुँचे।[28] यद्यपि नजाबत खाँ अपनी नाक कटवाये बिना ही भागने में सफल हो गया किन्तु शाहजहां ने उसकी पराजय से क्रोधित होकर उसका मनसब उससे छीन लिया।[29] इस प्रकार रानी ने अपनी रणनीति व चतुराई से मुगल सेना को वहाँ से भागने पर विवश किया और पुनः दून घाटी की गढ़ियों पर अपना अधिकारी किया। गढ़वाल की अदम्य साहसी और नीति कुशल वीरांगना के विषय में डॉ0 डबराल का कहना है, ''राणी के समान वीरत्व, साहस, सूझबूझ और राजनीतिक कुशलता से सम्पन्न रानियां भारत में तथा विदेशों में भी बहुत कम हुई है। उसके जीवनकाल में ही उसमें अलौकिक शक्ति रूप में पूजी जाने लगी थी। तंत्र–मंत्र, झाड़ा–ताड़ा और रखवालियों में आज भी माता कर्णावती की दुहाई दी जाती है।[30]

रानी राजा लक्ष्मी चन्द

गढ़वाल के राजा मानशाह के राजकवि भरत कवि कृत 'मानदेय एवं पंवाड़ो के अनुसार, कुमाऊँ राजा लक्ष्मीचन्द ने गढ़प्रदेश पर सात बार आक्रमण किया और सातों बार हारे। सातवी बार अपनी जान बचाकर किसी प्रकार अल्मोड़ा पहुँचे। इस बार राजा मानशाह विशाल सेना लेकर चम्पावत पर आक्रमण किया। सात दिन तक भीषण युद्ध हुआ। रणभूमि लाशों और रक्त से भर गई। अन्त में राजा लक्ष्मीचन्द युद्धभूमि से भाग खडा हुआ। कहा जाता है उसकी कायरता को देखकर रानी ने उसे बहुत फटकारा और स्वंय युद्धभूमि में जाकर सेना का नेतृत्व संभाला और कई दिनों तक उसने वीरतापूर्वक युद्ध किया। रानी के युद्ध संचालन के कारण सैनिक भी उत्साह से भर उठे और शत्रु पक्ष की सेना का वीरता से मुकाबला किया। यद्यपि रानी अन्त में पराजित हो गई।[31] किन्तु फिर भी उसका अदम्य साहस उसे इतिहास में स्थान प्रदान करने में सफल रहा।

वीरांगना धना

नारसीड़ और धना की लोकगाथा के अनुसार अस्कोट के राजा नारसीड़ डोटी अभियान के युद्ध में मल्ली डोटी के राजा कालीचन्द के द्वारा मारे गये। उनकी मृत्यु का समाचार सुन उनकी रानी धना ने अपने पति के हत्यारे राजा कालीचन्द को मार कर अपना पति के शव के साथ सती होने की प्रतिज्ञा की। इस प्रकार की प्रतिज्ञा कर रानी धना ने पुरूष वेश धारण कर, हाथ में कटार ले घोड़े पर सवार होकर काली नदी को पार कर तल्ली डोटी पहुँची और रणचण्डी बनकर दुश्मनों का संहार करना शुरू कर दिया। लोगों में हाहाकर मच गया उन्होंने अपने प्राण की रक्षा हेतु राजा कालीचन्द से गुहार लगाई। राजा कालीचन्द गुस्से से आग बबूला होकर कहा– ''एक कुमय्या पहले आया था, जो मेरे क्रोधाग्नि में झुलस कर

यहीं धराशायी हुआ पड़ा है और अब उसी क्रधाग्नि में झुलसने के लिए तू आया है? उसने मरते समय ईश्वर को याद न करके अपनी पत्नी धना का याद किया था। अतः अब मैं पहले तुझे यमराज का अतिथि बना कर फिर उस रूपसी धना को लेने के लिए अस्कोट जाऊगां, देखता हूँ वह कितनी रूपवती है। ऐसा कहा जाता है कि कालीचन्द धना के मामा का लड़का था। उसके इन शब्दों ने दहकती हुई अग्ति ज्वालाओं में घी का काम किया और उस सिंहिनी ने दहाड़ते हुए कहा– ''यदि तूने अपनी माता का स्तन पान किया है और अपने पिता का सच्चा सपूत है तो पहले मुझसे युद्ध कर तब कही धना को प्राप्त करने की बात सोचना। धना को लाने की बात तो दूर रही अब तू इस शरीर से काली पार भी नही जा सकेगा। मैं तुझे यमराज का अतिथि बना दूँगा।'' गाथा के अनुसार कालीचन्द तथा रानी धना के बीच तीन दिन–रात तक लगातार युद्ध चलता रहा। युद्ध में कालीचन्द द्वारा किए गए भालों के प्रहार से रानी का स्त्री रूप सामने आ गया। अपने सम्मुख वीर यौद्धा के रूप में स्त्री को देखकर कालीचन्द ने युद्ध बन्द कर दिया और उसके शौर्य और सौन्दर्य से प्रभावित होकर उसको अपनी महारानी का पद स्वीकार करने का अनुरोध किया। वस्तुस्थिति को देखते हुए रानी धना ने विनम्रता से कहा कि मैं आपकी रानी बनने को तैयार हूँ पर पहले आप मेरे पति का शव दे दीजिए। उसकी चिता पर अपना यह मंगलसूत्र चढ़ाकर मैं उसके बन्धन से मुक्त हो जाऊंगी, तब आपकी महारानी बन जाऊंगी। यह सुनकर राजा कालीचन्द रानी धना को उसके पति का हाथ कटा शव दिखाकर उससे कहा– ''मैं अभी इसके दाह संस्कार का प्रबन्ध कर देता हूँ। किन्तु रानी ने उसे समझाया कि यहां डोटी में दाह–संस्कार कर देने से उसकी आत्मा यही रह जायेगी तथा हमारे प्रेम में विध्न डाला करेगी। अतः इसका संसकार काली के उस पार करना ही उतिच होगा।'' रानी धना की बातों में आकर कालीचन्द तुरन्त उसके साथ काली नदी पार जाकर दाह संस्कार के लिए तैयार हो गया। उस वक्त काली नदी में बाढ़ आयी हुई थी जिसके कारण कोई भी नदी पार करने का साहस नहीं कर सका। तब रानी ने कालीचन्द को तुम्बियों के सहारे नदी पार करने की बात कही। राजा ने तुरन्त तुम्बियां मंगवाई और कुछ तुम्बियां राजा ने अपने तथा कुछ तुम्बियां रानी धना ने अपनी कमर में बांधी और पति के शव को अपनी पीठ पर बांधकर नदी में छलांग लगाई। रानी धना द्वारा राजा के कमर में बांधी हुई तुम्बियों में छेद किए जाने के कारण उसकी तुम्बियों में पानी भरने लगा जिससे वह डूबने लगा जब उसने बचाव के लिए रानी धना को पुकारा तब रानी धना ने कमर से कटार निकालकर उसका सिर अलग कर अपने पति के हत्यारे से बदला लिया और काली नदी पार कर पति के शव के साथ सती हो गई।[32] इस प्रकार वह अपने अदम्य साहस एवं पराक्रम के लिए आज भी लोकगाथाओं में जीवित है।

राजकुमारी सन्तुला देवी

यद्यपि इस वीरांगना का जीवन परिचय तो ज्ञात नहीं हो पाया है किन्तु इनकी वीरता, शौर्य, पराक्रम के कारण आज भी इनकी पूजा की जाती है। जब गढ़वाल नरेश यवनों या कोई बाहय आक्रमण द्वारा पराजित होकर देहरादून घाटी छोडने को विवश हो गये तब उनकी बेटी राजकुमारी सन्तुला ने सेना का नेतृत्व किया और यवन सेना के साथ डटकर मुकाबला किया और अन्त में वीरगति को प्राप्त हुई। देहरादून के समीप गढ़ी के पार उस गढ़ के भग्नावशेष अभी तक दिखाई पड़ते हैं। उस गढ़ के बीच में एक पुराना मन्दिर है जहाँ आज भी उस वीरांगना को देवी के रूप में पूजा जाता है।[33]

लोकगाथाओं में न केवल वीरांगनाओं का यशोगान अपितु नारियों द्वारा अपने पतियों व पुत्रों में भी साहस प्रस्फुटित करने का वर्णन है। जगदेव पंवार की लोकगाथा में उनकी सातवीं ''रानी चौहान्या'' का साहस अद्भूत प्रतीत होता है। इस गाथा के अनुसार स्वर्गलोक से त्रिलोकी नारायण भगवान कैड़ी कंकाली को मृत्युलोक में ऐसे वीर, साहसी दानी का पता लगाने भेजते है जो हँसते–हँसते अपना सिर काट कर दे देगा तो वह गढ़वाल का राज्य प्राप्त कर सकेगा। कैड़ी कंकाली मृत्युलोक में धारा नगरी पहुँची जहाँ जयदेव व जगदेव दो भाई थे। जब वह जयदेव के यहाँ पहुँची तो उसने अपने दरबारियों से यह कहलाया कि राजा शिकार खेलने गया है और उसे अपने द्वार से लौटवा दिया। कैड़ी कंकाली उसे शाप देती है कि जैसा तुमने सोचा वैसा ही हो जाए। इसके पश्चात् वह जगदेव पंवार के द्वार पर गई। जगदेव ने अपनी छह रानियों से पूछा कि कैड़ी कंकाली का क्या दान में दे तो हरेक रानी ने अलग अलग बहुमुल्य चीजे दान देने को कही।[34] अन्त में जगदेव ने अपनी सातों रानियों में से किसी एक रानी का सिर काटकर देने का सोचा किन्तु छह रानियों ने राजा को मना कर दिया।[35] उसकी सातवीं रानी चौहान्या जिसे उसने उपेक्षित रखा था, से दान के सम्बन्ध में प्रश्न किया तो उसने कहा कि –''आप मेरे स्वामी मेरे सिर के छत्र हो, आप आदेश करे तो मैं अपना सिर भी काटकर दान दे दूँ।'' रानी चौहान्या ने पुरूष के वस्त्र पहनकर वीरों का वेश बनाया, श्रृंगार किया और जगदेव पंवार से विनम्रतापूर्ण कैड़ी कंकाली को अपना सिर दान में देने का आग्रह किया। रानी चौहान्या के साहस को देखकर जगदेव पंवार में वीरता का संचार उत्पन्न हुआ और उसने अपना सिर काटकर केड़ी कंकाली को अर्पित किया। भगवान ने प्रसन्न होकर जगदेव पंवार का कटा सिर धड से जोड़ दिया। इस पर भी चौहन्या राणी ने स्वाभिमान का प्रदर्शन किया दान में दी हुई चीज वापस नहीं ली जाती। तब देवताओं ने जगदेव पंवार का नया सिर उत्पन्न कर उसे जीवित किया। लोकगाथा में वर्णित इस संदर्भ की कुछ पक्तिंया इस प्रकार हैः–

तब बोलदी वैकी वा चौहान्या राणी
स्वामी तुम होला मेरा सिर का छत्तर
तुम बोलदाई त स्वामी मैं–
अपणू सिर काटीक भी देणकू तैयार छऊँ।[36]

''रिखेला लोदी का पंवाड़ा'' भी वीरों की माँ के आत्मसम्मान और साहस को प्रदर्शित करता है। रिखोला लोदी का पिता भौसिंह वीर भड़ था। गढ़नरेश महिपतशाह के शासन काल में सिरमौर तथा कुमाऊँ के राजा पर विजय करने के उपरान्त वह धोखे से स्नान करते हुए

मारा जाता है। उसके पश्चात महिपतशाह के सैनिक रिखोला लोदी को अपने पिता की जगह युद्ध करने के लिए बुलाने आते हैं।[37] रिखोला के इन्कार करने पर उसकी वीर प्रसविनी माता कहती है कि ''देश की रक्षा के लिए चाहे प्राण भी देने पड़े, पर वीरों को पीछे नहीं हटना चाहिए।'' और ''मेरे दूध की लाज रखना और अपने कुल को कलंक न लगाना।'' रिखोला लोदी अपनी वीरता, रणकुशलता और सैन्य संचालन द्वारा शत्रुओं पर विजय प्राप्त करता है किन्तु अपने राज्य दरबारियों के षड़यन्त्रों द्वारा मारा जाता है।[38] यदि माँ का वीर पुत्र युद्ध भुमि में मारा जाता है तो माँ को अपने वीर पुत्र पर गर्व होता है किन्तु यदि वह अपने ही प्रजाजनों के षडयंत्रों का शिकार होता है तो माँ का दुखी होना स्वाभाविक था। आहत माँ ने पूरी गढ़भूमि को ही अभिशाप दे दिया कि इस भूमि में कोई भड़ उत्पन्न न हो और यह कहकर अपने प्राणों का भी बलिदान दे दिया।[39] ''रणू झंकडू के पवाड़ा'' में दो भाईयों की लड़ाई में जब उनकी पत्नियां लड़ाई छुड़ाने का प्रयत्न करती है और सफल नहीं होती तब उनकी माँ उन दोनों पुत्रों की कलाइयों को इस तरह से पकड़ती है कि वह नौ दिन नौ रात तक उससे छूट नहीं पाते। यह पवाड़ा माँ की शक्ति को बताता है।[40] इन प्रसंगों से यह भी स्पष्ट होता है कि उत्तराखण्ड में वीरांगनाओं ने माँ, पत्नी, पुत्री के रूप में अपने शौर्य, वीरता का प्रदर्शन किया है। यद्यपि उन्हें इतिहास में अपेक्षित स्थान प्राप्त नहीं हो सका है।

निष्कर्ष

संक्षेप में इस शोध पत्र के माध्यम से हमारा लक्ष्य भी यही है कि उत्तराखण्ड की इन वीरांगनाओं की उपलब्धि को मान्यता प्राप्त हो। जिन्होंने अपने समक्ष आयी विपत्तियों को अपना भाग्य मान रूदन करने की अपेक्षा डटकर मुकाबला किया और अपने रक्त से वीरता की अमर गाथाएं लिखी है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *डॉ0 गुंसाई, एम0एस0, अनुराधा गुंसाई, उत्तराखण्ड का इतिहास (एक नवीन मूल्यांकन) (2016).ऑनलाइन गाथा पब्लिकेशन. लखनऊ. पृ0 9।*
2. *डॉ मोहन, सविता, उत्तराखण्ड समग्र अध्ययन (2007) तक्षशिला प्रकाशन नई दिल्ली. पृ0 9।*
3. *डॉ0 गुंसाई, एम0एस0, अनुराधा, पूर्वोक्त पृ0 18।*
4. *डॉ0 गुंसाई, एम0एस0, अनुराधा, पूर्वोक्त पृ0 19।*
5. *नैथानी, शिव प्रसाद, उत्तराखण्डः संस्कृति, साहित्य और पर्यटन (1982). सरस्वती पब्लिकेशन. पृ0 179–180।*
6. *बत्वार्ल, वीरेंद्र सिंह, गढवाली गाथाओ में लोक देवता (2014). विनशर पब्लिशिंक क0 देहरादून. पृ031।*
7. *शैलेष, हरिदत्त भटट्, गढवाली भाषा और उसका सहित्य (1976). शिवलाल प्रिन्टर्स वाराणसी. पृ0180।*
8. *डॉ चातक, गोविन्द, भारतीय लोक संस्कृति का सन्दर्भः मध्य हिमालय (2014). तक्षशिला प्रकाशन. नई दिल्ली. पृ0244।*
9. *डॉ नैथानी, शिवप्रसाद, पूर्वोक्त. पृ0180।*
10. *डॉ0 गुसाई, एम0एस0, अनुराधा, पूर्वोक्त पृ020।*
11. *डॉ0 सहगल, मंमगाई, सुधा, शिखा, पौडी गढवाल के लोकसंगीत का विश्लेषणात्मक अध्यपन(2006)0राधा पब्लिकेशन नई दिल्ली.पृ0110।*
12. *डॉ चातक, गोविंद, पूर्वोक्त. पृ0143।*
13. *डॉ सहगल मंमगाई, सुधा, शिखा, पूर्वोक्त. पृ0110।*
14. *सकलानी .शक्ति प्रसाद–उत्तराखण्ड की विभूतियाँ(2001). उत्ताखण्ड प्रकाशन ट्रांजिट कैम्प रुद्रपुर.उधमसिंह नगर.पृ071।*
15. *दर्शन. भक्त–गढवाल की दिवंगत विभूतियाँ(1980). सरस्वती प्रेस.देहरादून.पृ0138, 139।*
16. *डॉ शैलेश. हरिदत्त भटट–पूर्वोक्त. पृ0189।*
17. *शर्मा. डी0डी0, उत्तराखण्ड का सामाजिक एवं सांस्कृतिक इतिहास–2 (2003) उत्तरायण प्रकाशन नैंनीताल. पृ0135।*
18. *दर्शन भक्त–पूर्वोक्त.पृ0 145.146।*
19. *डबराल. शिवप्रसाद–उत्तराखण्ड का राजनैतिक तथा सांस्कृतिक इतिहास–3.वीर–गाथा–प्रकाशन दो गडा. गढवाल.पृ0498।*
20. *डॉ मोहन, सविता, पूर्वोक्त पृ0319।*
21. *डबराल शिवप्रसाद–पूर्वोक्त.पृ0498।*
22. *डॉ मोहन.सविता–पूर्वोक्त.पृ0319।*
23. *शर्मा.डी0डी0–पूर्वोक्त. पृ0138।*
24. *डबराल, शिवप्रसाद, उत्तराखण्ड का इतिहास–4. वीर–गाथा–प्रकाशन, दो गडा गढवाल.पूर्वोक्त. पृ0 267।*
25. *दर्शन, भक्त, पूर्वोक्त. पृ0129।*
26. *डबराल, शिवप्रसाद, पूर्वोक्त. पृ0267–268।*
27. *वहीं–पूर्वोक्त. पृ0269–270।*
28. *शर्मा. डी0डी0–पूर्वोक्त. पृ0130।*
29. *डबराल, शिवप्रसाद, पूर्वोक्त. पृ0270।*
30. *डबराल, शिवप्रसाद, गढ़वाल का नवीन इतिहास–12, वीर–गाथा– प्रकाशन, दोगडा गढवाल.पृ079–80।*
31. *डबराल, शिवप्रसाद, उत्तराखण्ड का इतिहास–4, पूर्वोक्त पृ0234, 237।*
32. *शर्मा.डी0डी0–पूर्वोक्त. पृ0136–137।*
33. *दर्शन, भक्त, पूर्वोक्ति. पृ0175।*
34. *बर्त्वाल, वीरेन्द्र सिंह–पूर्वोक्त. पृ0185।*
35. *डॉ चातक, गोविन्द–पूर्वोक्त. पृ0281।*
36. *बर्त्वाल, वीरेन्द्र सिंह–पूर्वोक्त. पृ0185–186।*
37. *डॉ चातक, गोविंद, पूर्वोक्त. पृ0271–272।*
38. *दर्शन, भक्त, पूर्वोक्त. पृ0119।*
39. *बर्त्वाल, वीरेन्द्र सिंह, पूर्वोक्त. पृ0139।*
40. *डॉ0 चातक, गोविन्द, पूर्वोक्त. पृ0276।*